के निर्देशानुसार सर्वतोभावेन भगवान् के शरणागत होकर वैधी भक्ति में तत्पर हो जाना चाहिए। भक्तिमय जीवन की चरम अवस्था को भाव अथवा भगवत्प्रेम कहा जाता है।

श्रील रूपगोस्वामिचरण द्वारा प्रणीत भक्तिविज्ञान 'श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु' के अनुसार:

आदौ श्रद्धा ततः साधु संगोऽथ भजनक्रिया।
ततोऽनर्थनिवृत्तिः स्यात्ततो निष्ठा रुचिस्ततः।।
अथासक्तिस्ततो भावस्ततः प्रेमाभ्युदंचति।
साधकानामयं प्रेम्णः प्रादुर्भावे भवेत्क्रमः।।

भक्तिपथ का प्रारम्भ स्वरूप-साक्षात्कार विषयक इच्छा से होता है। इससे मनुष्य साधु-संग के लिए प्रयत्न करता है। तदुपरान्त भगवत्प्राप्त सद्गुरु से दीक्षा ग्रहण कर उनकी आज्ञानुसार साधक भक्ति का प्रारम्भ करता है। गुरु के पादपद्मों के आश्रय में भक्ति का अनुष्ठान करने से क्रमशः विषयासक्ति से मुक्त, स्वरूप-साक्षात्कार के पथ में निष्ठा और भगवत्कथा में रुचि उद्भावित होती है। इस कथारुचि से कृष्णभावनामृत में आसक्ति हो जाती है, जो भगवत्प्रेम के प्रथम सोपान—भाव में परिपक्व होती है। वस्तुतः भगवत्प्रेम में ही जीवन की सार्थकता और चरितार्थता है। प्रेमाविष्ट भक्त रागानुगा भगवद्भक्ति में नित्य तत्पर रहता है। इस प्रकार सद्गुरु के आश्रय में भक्ति की क्रमिक पद्धति के द्वारा सब प्रकार की विषयासक्ति, पृथक् स्वरूप के भय तथा शून्यवादजनित निराशा से सर्वथा रहित सर्वोच्च मुक्त अवस्था प्राप्त होती है और अन्त में भगवद्धाम की प्राप्ति भी हो जाती है।

27/3

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।११।।

ये =जो; **यथा** =जैसे; **माम्** =मेरी; **प्रपद्यन्ते** =शरण लेते हैं; **तान्** =उन्हें; **तथा** =वैसे ही; **एव** =निस्सन्देह; **भजामि** =फल देता हूँ; **अहम्** =मैं; **मम** =मेरे; **वर्त्म** =पथ का; **अनुवर्तन्ते** =अनुगमन करते हैं; **मनुष्याः** =सब मनुष्य; **पार्थ** =हे अर्जुन; **सर्वशः** =सब प्रकार से।

अनुवाद

जो जिस भाव से मेरी शरण लेते हैं, उसी के अनुरूप मैं उन्हें फल देता हूँ। हे पार्थ! मनुष्यमात्र सब प्रकार से मेरे ही पथ का अनुगमन करता है।।११।।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण की विभिन्न अभिव्यक्तियों में मनुष्य उन्हीं का अन्वेषण कर रहा है। निर्विशेष ब्रह्मज्योति और सबके अन्तर्यामी परमात्मा रूप में भगवान् श्रीकृष्ण का पूर्ण अनुभव नहीं होता; श्रीकृष्ण की सम्पूर्ण प्राप्ति तो केवल उनके शुद्धभक्तों को ही होती है। इस प्रकार से श्रीकृष्ण सभी की अनुभूति के विषय हैं; कोई भी प्राणी उन्हें प्राप्त करने की अपनी इच्छा के अनुपात में सन्तोष पाता है। दिव्य वैकुण्ठ-जगत् में भी श्रीकृष्ण शुद्धभक्तों की कामना के अनुसार दिव्य रसों में